5

मध्यकालीन उत्तर भारत में बौद्ध धर्म का पतनः सामाजिक-धार्मिक परिवर्तन एवं ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान का प्रभाव

कादम्बरी एवं पिन्टू कुमार***

भारतवर्ष की धरती जहाँ बौद्ध धर्म ने जन्म लिया और चतुर्दिक फैलकर एक विश्व धर्म का रूप धारण किया, वहीं मध्यकालीन कालखण्ड (लगभग 700 ईस्वी से 1200 ईस्वी तक, विशेषकर उत्तर भारत में) में इस धर्म का अदृश्य होना एक जटिल और विचारणीय ऐतिहासिक घटना है। गुप्तोत्तर काल से लेकर दिल्ली सल्तनत के उदय तक का यह दौर उत्तर भारत में बौद्ध धर्म के लिए गहरा संकट लेकर आया। कभी नालंदा, विक्रमशिला और ओदंतपुरी जैसे विशाल विश्वविद्यालयों एवं स्तूपों से गुंजायमान भूमि धीरे-धीरे बौद्ध परम्परा की अनुपस्थिति से सूनी हो गई। यह पतन किसी एक कारण का परिणाम नहीं, बल्कि अन्तर्ग्रथित सामाजिक, आर्थिक, धार्मिक और राजनीतिक परिवर्तनों की एक जटिल गाथा है। इनमें ब्राह्मणवादी परम्परा (हिन्दू धर्म) के पुनरुत्थान और पुनर्गठन की प्रक्रिया का प्रभाव एक प्रमुख और विवादास्पद कारक रहा है। यह शोध पत्र इसी जटिल ऐतिहासिक परिवर्तन का विश्लेषण करते हुए मध्यकालीन उत्तर भारत में बौद्ध धर्म के पतन के प्रमुख कारणों, विशेष रूप से सामाजिक-धार्मिक परिवर्तनों और ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान की भूमिका का गहन अध्ययन प्रस्तुत करेगा।

[**प्रमुख शब्द :** बौद्ध धर्म, ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान, भक्ति आन्दोलन, पुराण, भूमि अनुदान, बौद्ध विहार, तान्त्रिक बौद्ध धर्म, संघ का भ्रष्टाचार, इस्लामी आक्रमण, राजकीय संरक्षण, सांस्कृतिक समावेशन, वज्रायान।]

* **शोधार्थी, बौद्ध अध्ययन विभाग, मोतीलाल नेहरू कालेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।**

** **प्रोफेसर (शोध निर्देशक), इतिहास विभाग, मोतीलाल नेहरू कालेज (सांध्य), दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।**

1. ऐतिहासिक पृष्ठभूमिः उत्थान से पतन की ओर

1. प्राचीन उत्कर्षः मौर्य (विशेषकर अशोक) एवं कुषाण कालों में बौद्ध धर्म ने राजकीय संरक्षण पाकर जबरदस्त उन्नति की। स्तूपों, विहारों और विश्वविद्यालयों का निर्माण हुआ। व्यापार मार्गों के साथ-साथ यह दक्षिण पूर्व एशिया तक फैला।

2. गुप्त कालः परिवर्तन के बीजः गुप्त काल (लगभग 320-550 ईस्वी) को अक्सर 'हिन्दू पुनर्जागरण' का काल कहा जाता है। गुप्त शासकों ने, हालाँकि सहिष्णु थे और बौद्ध संस्थानों को दान दिया (जैसे नालंदा का निर्माण), लेकिन उनका प्राथमिक पोषण वैष्णव एवं शैव हिन्दू परम्पराओं का था। पुराणों की रचना, मन्दिर निर्माण और वैदिक अनुष्ठानों का पुनरुत्थान हुआ। बौद्ध धर्म, विशेषकर महायान और वङ्कायान शाखाएँ, वैदिक देवताओं और तान्त्रिक प्रथाओं को आत्मसात करने लगीं, जिससे उसकी विशिष्ट पहचान धुँधली होने लगी। साथ ही, बौद्ध संघ (संघ) धीरे-धीरे अत्यधिक सम्पन्न और कर्मकाण्डी होता चला गया, जिससे सामान्य जनता से उसका जुड़ाव कमजोर पड़ने लगा।

3. गुप्तोत्तर अराजकताः गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद उत्तर भारत छोटे-छोटे राज्यों में बँट गया। हूणों के आक्रमणों (विशेषकर मिहिरकुल, लगभग 6वीं शताब्दी) ने उत्तर-पश्चिम भारत में बौद्ध केन्द्रों को भारी क्षति पहुँचाई। इस राजनीतिक अस्थिरता ने संस्थागत बौद्ध धर्म के लिए संरक्षण के स्रोत सुखा दिए।

2. सामाजिक-आर्थिक कारकः जनाधार का क्षरण

1. व्यापार मार्गों का विस्थापनः प्राचीन काल में बौद्ध धर्म का प्रसार व्यापार मार्गों (जैसे उत्तरापथ) के साथ हुआ था और व्यापारी वर्ग इसका प्रमुख संरक्षक था। मध्यकाल में व्यापार मार्गों में परिवर्तन आया। नए मार्गों के विकास और पुराने मार्गों के महत्त्व में कमी से उन शहरी केन्द्रों और व्यापारिक समुदायों का पतन हुआ जो बौद्ध धर्म के प्रमुख आधार थे।

2. कृषि आधारित अर्थव्यवस्था एवं भूमि अनुदानः अर्थव्यवस्था का केन्द्र व्यापार से हटकर कृषि की ओर बढ़ा। शासक वर्ग भूमि अनुदान (अग्रहार, ब्रह्मदेय) ब्राह्मणों, मन्दिरों एवं हिन्दू धार्मिक संस्थानों को देने लगे। ये अनुदान न केवल आर्थिक संसाधन प्रदान करते थे बल्कि सामाजिक प्रतिष्ठा और स्थानीय प्रभाव का केन्द्र भी बन गए। बौद्ध विहारों को इस प्रकार के व्यापक भूमि अनुदान प्राप्त होना कम हो गया, जिससे उनकी आर्थिक निर्भरता और स्थानीय प्रभाव घटा।

3. ग्रामीण समाज से अलगावः बौद्ध विहार एवं विश्वविद्यालय मुख्यतः शहरी केन्द्रों या उनके निकट स्थित थे। जैसे-जैसे सामाजिक-आर्थिक गतिविधियों का केन्द्र ग्रामीण क्षेत्रों में स्थानान्तरित हुआ, बौद्ध संस्थान ग्रामीण जनजीवन की धड़कन से कटते चले गए। दूसरी ओर, हिन्दू मन्दिर एवं स्थानीय देवता गाँवों के जीवन का अभिन्न अंग बन गए।

4. सामाजिक समावेशन की चुनौतीः प्रारम्भिक बौद्ध धर्म ने जाति व्यवस्था की आलोचना करके निम्न जातियों एवं वंचितों को आकर्षित किया था। हालाँकि, मध्यकाल तक

आते-आते बौद्ध संघ भी कुछ हद तक सामाजिक स्तरीकरण एवं कर्मकाण्ड के चंगुल में फँस गया था। साथ ही, ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान के अन्तर्गत चली भक्ति आन्दोलन (जिस पर बाद में विस्तार से चर्चा होगी) ने, विशेषकर निम्न जातियों और महिलाओं के लिए, भावनात्मक लगाव और सामाजिक स्वीकृति का एक सशक्त मंच प्रदान किया, जिसने बौद्ध धर्म की अपील को काफी हद तक कम कर दिया।

3. ब्राह्मणवादी पुनरुत्थानः पुनर्गठन, प्रचार एवं प्रभाव

ब्राह्मणवादी परम्परा (जिसे हम आधुनिक हिन्दू धर्म के पूर्ववर्ती के रूप में देख सकते हैं) ने गुप्तकाल और उसके बाद एक उल्लेखनीय पुनरुत्थान एवं परिवर्तन का दौर देखा। यह पुनरुत्थान बौद्ध धर्म के पतन में एक निर्णायक कारक सिद्ध हुआ।

1. पुराणों का निर्माण और लोकधर्मीकरणः

- ब्राह्मणवादी बुद्धिजीवियों ने विशाल पुराण साहित्य (विष्णु पुराण, शिव पुराण, भागवत पुराण आदि) की रचना की।
- इन पुराणों ने जटिल वैदिक कर्मकाण्डों को सरल कथाओं, लोककथाओं, भक्ति भावना और स्थानीय देवी-देवताओं के समावेश के माध्यम से जनसाधारण तक पहुँचाया।
- बौद्ध जातक कथाओं और दार्शनिक विचारों को भी इन पुराणों में आत्मसात कर लिया गया (जैसे बुद्ध को विष्णु का अवतार घोषित करना)। इसने बौद्ध धर्म की विशिष्टता को धुँधला किया और लोगों को एक परिचित सांस्कृतिक-धार्मिक ढाँचे में लौटने का मार्ग प्रशस्त किया।

2. भक्ति आन्दोलनः भावनात्मक क्रान्तिः

- यह मध्यकालीन भारत का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण धार्मिक आन्दोलन था जिसने ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान को जनाधार प्रदान किया।
- आलवार (वैष्णव) और नयनार (शैव) सन्तों ने तमिलनाडु में इसकी शुरुआत की, जो धीरे-धीरे सम्पूर्ण भारत, विशेषकर उत्तर भारत में फैल गया। उत्तर भारत में रामानंद, कबीर, मीराबाई, तुलसीदास, सूरदास आदि इसके प्रमुख प्रवर्तक बने।
- भक्ति ने व्यक्तिगत, भावनात्मक एवं प्रेमपूर्ण भगवद्-भक्ति पर जोर दिया। इसने जाति, लिंग एवं जटिल कर्मकाण्ड की बाधाओं को नकारा (हालाँकि व्यवहार में यह सीमित रहा)।
- **बौद्ध धर्म के प्रति प्रभावः** भक्ति ने उस भावनात्मक एवं व्यक्तिगत आध्यात्मिकता की प्यास बुझाई जिसे मध्यकालीन बौद्ध धर्म (विशेषकर

वङ्कायानीय तान्त्रिक प्रथाओं में उलझा हुआ) पूरा करने में असमर्थ दिखाई देने लगा था। यह आन्दोलन सीधे गाँवों एवं सामान्य जनता तक पहुँचा और उन्हें ब्राह्मणवादी परम्परा के भीतर ही एक सरल, आकर्षक एवं सामाजिक स्वीकृति देने वाला विकल्प प्रदान किया। बौद्ध धर्म का नैरात्मवादी दर्शन एवं संघ-केन्द्रित जीवन इस भावनात्मक लहर के सामने पीछे छूटता चला गया।

3. मन्दिरों का उदयः सामाजिक-आर्थिक-धार्मिक केन्द्रः

- राजाओं एवं सामन्तों के संरक्षण में विशाल एवं भव्य मन्दिरों (जैसे खजुराहो, भुवनेश्वर, कोणार्क) का निर्माण हुआ।
- ये मन्दिर केवल पूजा स्थल नहीं थे; वे सामाजिक सभाओं, सांस्कृतिक कार्यक्रमों (नृत्य, संगीत), आर्थिक गतिविधियों (भूमि प्रबंधन, व्यापार) और शैक्षिक केन्द्रों के रूप में भी कार्य करते थे। मन्दिरों के आसपास समृद्ध नगर विकसित होते थे।
- इसने एक समानान्तर एवं अत्यधिक सफल संस्थागत ढाँचा खड़ा किया जिसने बौद्ध विहारों की भूमिका को चुनौती दी और अन्ततः उसका स्थान ले लिया। मन्दिरों को मिलने वाले विशाल भूमि अनुदानों ने उन्हें आर्थिक रूप से स्वावलम्बी और प्रभावशाली बना दिया।

4. ब्राह्मणों की भूमिकाः बौद्धिक एवं सामाजिक पुनर्स्थापनाः

- ब्राह्मणों ने न केवल पुराणों की रचना की बल्कि राजदरबारों में मन्त्री, सलाहकार और प्रशासक के रूप में भी अपनी स्थिति मजबूत की। वे राजाओं के धार्मिक अनुष्ठानों (राजसूय, अश्वमेध) के अपरिहार्य अंग थे, जो राजशक्ति को दैवीय स्वीकृति प्रदान करते थे।
- उन्होंने सामाजिक व्यवस्था (वर्णाश्रम धर्म) को पुनः स्थापित एवं सुदृढ़ करने का कार्य किया, जिससे उनकी सामाजिक प्रतिष्ठा और अधिकार बहाल हुआ। इस व्यवस्था में बौद्ध संघ की भूमिका सीमित हो गई।
- शंकराचार्य (लगभग 8वीं शताब्दी) जैसे दार्शनिकों ने अद्वैत वेदान्त के माध्यम से बौद्ध शून्यवाद एवं विज्ञानवाद का प्रभावी जवाब दिया और वैदिक दर्शन की श्रेष्ठता स्थापित करने का प्रयास किया। हालाँकि शंकर का सीधा प्रभाव उत्तर भारत में सीमित था, लेकिन उनकी परम्परा ने बौद्ध दार्शनिक चुनौती का सामना करने में बौद्धिक आधार प्रदान किया।

4. बौद्ध संस्थानों की आन्तरिक चुनौतियाँः क्षरण के अन्दरूनी कारण

1. संघ का भ्रष्टाचार एवं विलासिताः समय के साथ बड़े बौद्ध विहार एवं विश्वविद्यालय अत्यधिक सम्पन्न हो गए। भिक्षुओं का जीवन कठोर नैतिकता एवं सादगी से हटकर विलासिता और सांसारिकता की ओर बढ़ने लगा। भ्रष्टाचार, राजनीति एवं आन्तरिक

कलह ने संघ की आध्यात्मिक शक्ति एवं सार्वजनिक प्रतिष्ठा को गम्भीर क्षति पहुँचाई। सामान्य जनता का विश्वास इन संस्थानों से उठने लगा।

2. तान्त्रिक प्रथाओं का प्रभावः वज्रायान एवं कालचक्रयान जैसी तान्त्रिक शाखाओं का उदय हुआ। इनमें जटिल यन्त्र-मन्त्र, गोपनीय अनुष्ठान एवं कामुक प्रतीकवाद सम्मिलित थे। जहाँ कुछ के लिए यह आध्यात्मिक उन्नति का मार्ग था, वहीं सामान्य लोगों के लिए यह भ्रामक एवं अन्धविश्वासपूर्ण लगता था। इससे बौद्ध धर्म की छवि धूमिल हुई और ब्राह्मणवादी आलोचकों को इसे 'भ्रष्ट' एवं 'पतित' बताने का मौका मिला। यह प्रवृत्ति बौद्ध धर्म को उसकी मूल सरलता और नैतिकता से दूर ले गई।

3. राजकीय संरक्षण का अभावः गुप्तोत्तर काल के बाद उत्तर भारत के अधिकांश शासक वंश (जैसे गुर्जर-प्रतिहार, पाल, राष्ट्रकूट - हालाँकि पाल पूर्वी भारत में बौद्ध संरक्षक थे, पर उत्तर-पश्चिम और मध्य भारत में नहीं) ब्राह्मणवादी हिन्दू परम्परा के संरक्षक बन गए। उन्होंने मन्दिरों को भूमि दान दी, यज्ञ करवाए और ब्राह्मणों को प्रश्रय दिया। बौद्ध संस्थानों को इस प्रकार के संरक्षण एवं संसाधनों से वंचित होना पड़ा, जिससे उनका क्रमिक पतन तय हो गया।

5. इस्लामी आक्रमणों एवं दिल्ली सल्तनत की भूमिकाः अन्तिम प्रहार?

1. आक्रमण एवं विध्वंसः 11वीं एवं 12वीं शताब्दी में मुहम्मद ग़ोरी और उसके सेनापतियों (विशेषकर बख्तियार खिलजी) के आक्रमणों ने उत्तर भारत के अन्तिम प्रमुख बौद्ध केन्द्रों (विशेषकर बिहार और बंगाल में स्थित नालंदा, विक्रमशिला, ओदंतपुरी) को भारी क्षति पहुँचाई। विहारों एवं पुस्तकालयों को जला दिया गया, भिक्षुओं का वध हुआ या वे भाग गए।

2. संस्थागत आधार का अन्तः इन विध्वंसों ने बौद्ध शिक्षा, अनुसन्धान एवं साधना के प्रमुख संस्थानों को समाप्त कर दिया। भिक्षु संघ बिखर गया। जो बचे, वे तिब्बत, नेपाल या दक्षिण-पूर्व एशिया की ओर पलायन कर गए।

3. परोक्ष प्रभावः हालाँकि ये आक्रमण तात्कालिक एवं हिंसक कारक थे, लेकिन यह समझना महत्त्वपूर्ण है कि जब ये हुए, तब उत्तर भारत में बौद्ध धर्म पहले से ही गहरे संकट में था। उसका सामाजिक-धार्मिक आधार पहले ही काफी हद तक क्षरित हो चुका था। राजनीतिक संरक्षण लगभग समाप्त हो चुका था और ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान ने उसे सांस्कृतिक रूप से हाशिए पर धकेल दिया था। इस्लामी आक्रमणों ने उस पहले से कमजोर ढाँचे को अन्तिम झटका दिया और शारीरिक रूप से उसके अवशेषों को नष्ट कर दिया। साथ ही, नए शासकों के धर्म के कारण, पुनर्स्थापना का कोई प्रयास सम्भव नहीं रहा।

6. निष्कर्षः बहुआयामी पतन की गाथा

मध्यकालीन उत्तर भारत में बौद्ध धर्म का पतन एक सरल सूत्रीय घटना नहीं, बल्कि ऐतिहासिक परिवर्तनों के जटिल जाल का परिणाम था। यह पतन अचानक नहीं हुआ, बल्कि सदियों के दौरान घटित हुए अनेक परस्पर जुड़े परिवर्तनों का सामूहिक प्रभाव था।

- **सामाजिक-आर्थिक बदलावः** व्यापार मार्गों का ह्रास, कृषि पर आधारित अर्थव्यवस्था में बदलाव, भूमि अनुदानों का हिन्दू संस्थानों की ओर प्रवाह और ग्रामीण समाज से बौद्ध संस्थानों का कटाव ने बौद्ध धर्म के भौतिक एवं जनाधार को कमजोर किया।
- **बौद्ध संस्थानों की आन्तरिक कमजोरियाँः** संघ में व्याप्त भ्रष्टाचार, विलासिता, आन्तरिक कलह एवं वङ्कायानीय तान्त्रिक प्रथाओं के चरम ने इसकी आध्यात्मिक प्रतिष्ठा और लोकप्रियता को गम्भीर नुकसान पहुँचाया। संघ अपनी मूल सादगी एवं जनसेवा के भाव से दूर हो गया।
- **ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान का निर्णायक प्रभावः** यह सबसे प्रमुख धार्मिक-सांस्कृतिक कारक था। पुराणों के माध्यम से लोकधर्मीकरण, भक्ति आन्दोलन द्वारा भावनात्मक आकर्षण का सृजन, भव्य मन्दिरों के निर्माण द्वारा सामाजिक-आर्थिक केन्द्रों की स्थापना, ब्राह्मणों द्वारा राजनीतिक प्रभाव एवं सामाजिक व्यवस्था की पुनर्स्थापना, और बौद्धिक स्तर पर दार्शनिक प्रतिक्रिया (जैसे अद्वैत वेदान्त) — इन सभी ने मिलकर एक गतिशील, लचीली एवं जनसमर्थित वैकल्पिक धार्मिक व्यवस्था खड़ी कर दी। भक्ति आन्दोलन ने विशेष रूप से निम्न जातियों एवं सामान्य जनता को ब्राह्मणवादी परम्परा में समाहित करने का एक सशक्त माध्यम प्रदान किया, जिससे बौद्ध धर्म की सामाजिक प्रासंगिकता समाप्त हो गई।
- **राजनीतिक संरक्षण का अभावः** अधिकांश शासक वंशों ने हिन्दू परम्परा को प्राथमिक संरक्षण देना शुरू कर दिया, जिससे बौद्ध संस्थान आर्थिक एवं राजनीतिक रूप से कमजोर पड़ गए।
- **इस्लामी आक्रमणः अन्तिम निर्णायकः** जब तुर्की सेनाओं ने बिहार एवं बंगाल के प्रमुख बौद्ध केन्द्रों को नष्ट किया, तब तक बौद्ध धर्म उत्तर भारत में पहले से ही एक कमजोर, संकुचित एवं सीमान्त परम्परा बन चुका था। इन हमलों ने उसके अवशेषों को भी मिटा दिया और पुनर्जीवन की कोई सम्भावना समाप्त कर दी।

इस प्रकार, मध्यकालीन उत्तर भारत में बौद्ध धर्म का पतन मुख्यतः उसकी स्वयं की आन्तरिक कमजोरियों, एक गतिशील एवं पुनर्जीवित ब्राह्मणवादी परम्परा द्वारा प्रस्तुत सामाजिक-धार्मिक-सांस्कृतिक चुनौती के सफल प्रतिमान, और अन्त में, बाहरी आक्रमणों के संयुक्त प्रभाव का परिणाम था। ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान ने सिर्फ एक विकल्प ही नहीं दिया, बल्कि उसने भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक परिवेश में खुद को इतना सफलतापूर्वक पुनर्गठित एवं पुनः स्थापित किया कि बौद्ध धर्म की निरन्तरता के लिए आवश्यक सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्थान ही संकुचित हो गया। यह पतन एक धर्म का अन्त नहीं, बल्कि भारतीय उपमहाद्वीप के धार्मिक परिदृश्य में एक बड़े बदलाव की गवाही है, जिसके प्रभाव आज तक दिखाई देते हैं।

सन्दर्भ-सूची

(अ) प्राथमिक स्रोतः

1. अल-बिरूनी, **किताब-उल-हिंद** (अथवा **भारत का इतिहास**) - (अरबी यात्री, 11वीं शताब्दी के प्रारंभ में उत्तर भारत का विवरण)।
2. तारानाथ, **तिब्बत का इतिहास** (Taranatha's *History of Buddhism in India*) - (17वीं शताब्दी का तिब्बती ग्रंथ, पतन के कारणों पर प्रकाश डालता है)।
3. ह्वेनसांग (युआन च्वांग), **सी-यू-की** (बौद्ध यात्रियों के भारत विवरण) - (7वीं शताब्दी में भारत यात्रा का विवरण, गुप्तोत्तर कालीन बौद्ध धर्म की स्थिति)।
4. **पुराण** (विशेषकर विष्णु पुराण, भागवत पुराण, शिव पुराण)।
5. भक्ति साहित्य (आलवार, नयनार, उत्तर भारतीय सन्त कवि)।

(ब) द्वितीयक स्रोत (Secondary Sources - Hindi & English):

6. शर्मा, आर० एस०, **भारत में प्रारंभिक मध्यकालीन समाज का उदय** (R.S. Sharma, *Indian Feudalism and Early Medieval Indian Society: A Study in Feudalisation*) - (सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन, भूमि अनुदानों का प्रभाव)।
7. ठाकुर, उपिंदर सिंह, **बौद्ध धर्म का इतिहास** (Upinder Singh, *A History of Ancient and Early Medieval India: From the Stone Age to the 12th Century*) - (व्यापक ऐतिहासिक सन्दर्भ)।
8. झा, डी० एन०, **प्राचीन भारतः ऐतिहासिक रूपरेखा** (D. N. Jha, *Ancient India: In Historical Outline*) - (सामान्य पृष्ठभूमि)।
9. झा, विद्याभूषण, **मध्यकालीन भारत में धर्म और समाज** (Vidyabhushan Jha, *Religion and Society in Medieval India*) - (धार्मिक गतिशीलता पर केंद्रित)।
10. चट्टोपाध्याय, देवीप्रसाद, **भारत में बौद्ध धर्म का इतिहास** (Debiprasad Chattopadhyaya, *Indian Atheism: A Marxist Analysis - Relevant sections on Buddhism's Decline*) - (दार्शनिक और सामाजिक विश्लेषण)।
11. रायचौधरी, हेमचंद्र, **प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास** (H. C. Raychaudhuri, *Political History of Ancient India*) - (राजनीतिक सन्दर्भ)।
12. ओमवेद्त, गेल, **बौद्ध धर्म भारत मेंः ब्राह्मणवादी पुनरुत्थान के विरुद्ध संघर्ष करते हुए** (Gail Omvedt, *Buddhism in India: Challenging Brahmanism and Caste*) - (सामाजिक संघर्ष के परिप्रेक्ष्य में विश्लेषण)।
13. शाह, अमित, **भक्ति आन्दोलनः एक पुनर्मूल्यांकन** (Amit Shah, *The Bhakti Movement: A Reinterpretation*) - (भक्ति आन्दोलन के उदय और प्रभाव पर)।
14. इल्तुतमिश, सैयद अहमद, **मध्यकालीन भारत में धर्म और राज्य** (Syed Ahmed Iltutmish, *Religion and State in Medieval India*) - (इस्लामी शासन के प्रभाव पर)।
15. एटीन लामोट, **भारत से बौद्ध धर्म का इतिहास** (Étienne Lamotte, *History of Indian Buddhism*) - (विस्तृत विद्वतापूर्ण इतिहास)।

16. रोनाल्ड डेविडसन, **भारतीय तान्त्रिक बौद्ध धर्मः बौद्ध तान्त्रिकों का एक सामाजिक इतिहास** (Ronald M. Davidson, *Indian Esoteric Buddhism: A Social History of the Tantric Movement*) - (तान्त्रिक बौद्ध धर्म की भूमिका पर)।
17. राम शरण शर्मा, **भारत में सामंती प्रवृत्तियों का उदय और समाज का संकट** (R.S. Sharma, *The Feudal Order: State, Society and Ideology in Early Medieval India*) - (सामाजिक-आर्थिक ढांचे के परिवर्तन पर)।
18. रोमिला थापर, **अशोक और मौर्य साम्राज्य का पतन** (Romila Thapar, *Ashoka and the Decline of the Mauryas*) और **प्रारंभिक भारत का इतिहास** (Early India: From the Origins to AD 1300) - (लंबी अवधि के ऐतिहासिक प्रक्रियाओं पर व्यापक दृष्टिकोण)।
19. भारतीय पुरातत्व सर्वेक्षण (ASI) रिपोर्ट्स, नालंदा, विक्रमशिला आदि स्थलों के उत्खनन रिपोर्ट। ★

https://doi.org/10.62047/JNDH.2025.10.31.43